Vol. 2, No. 2 (April 2013) P. 1-4 Sangeet Galaxy
ISSN: 2319-9695

लुप्त होती बुन्देलखण्ड की लोक विधायें

आलोक शुक्ल
शोध छात्र
संगीत एवं मंच कला विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश
E-mail- aalok.shukla.2010@gmail.com

भारत देश, विश्व का वह भू–भाग है, जहाँ पग–पग पर सांस्कृतिक भिन्नता पायी जाती है। अपनी सांस्कृतिक बाहुल्य के कारण ही इसने सभ्यता के अतिप्राचीन काल से ही विश्व में आदरपूर्ण स्थान प्राप्त किया। इसी सांस्कृतिक विविधता का एक मुख्य अंग लोकगायन परम्परा है। हर क्षेत्र में प्रायः अपनी–अपनी लोकगायन विधायें प्राचीनकाल से ही परिपोषित हुई हैं जिसका एक रंग बुन्देलखण्ड की लोकगायन शैली है। बुन्देलखण्ड में लोक संगीत सांस्कृतिक धरोहर के रूप में आज भी विद्यमान है, परन्तु बदलते परिवेश के कारण लोक संगीत की प्रतिष्ठा खतरे में है। इसकी वजह लोक कलाओं को संरक्षण न मिलना है। इसके लिये दोषी कोई भी हो परन्तु यदि आज भी इन लोक कलाओं को संरक्षण नहीं मिला तो इनका अस्तित्व सिर्फ पुस्तकों में मिलेगा व्यवहारिक तौर पर नहीं। बुन्देलखण्ड में अनेक लोकगीत की विधायें यथा – संस्कार गीत, यज्ञोपवीत, विवाह गीत, ऋतुगीत, श्रमगीत, जातीय गीत का प्रचलन रहा है। परन्तु वर्तमान में ज्यादातर लोक विधाएं पाश्चात्य संगीत के सामने दम तोड़ रही हैं।

देश का दूसरा 'कालाहारी' बुन्देलखण्ड आसमानी–नागहानी–सुल्तानी अपदाओं के चलते आज घोर गरीबी के संकट से जूझ रहा है। यहाँ के कलाकार दाने–दाने को मोहताज हैं। पलायन कर नगरों–महानगरों में घसिट रहे हैं। ''दुलदुल घोड़ी'' नृत्य की दुलदुल किसी झोपड़ी में टंगी चिथड़ा–चिथड़ा हो रही है क्योंकि पेट उस कलाकार को परदेश से आने नहीं दे रहा है। आज गाँवों में हर जाति बिरादरी की 'गउनहर' गाते–नाचते देवी पूजने पाश्चात्य वाद्य कैशियों के साथ जाती हैं क्योंकि ढपला बजाने वाला आज किसी महानगर की सड़कों में मजदूरी कर रहा है। गाँवों में टेलीविजन आ जाने से तो नौटंकी में ग्रहण सा लग गया है। राई, चंगेलिया, लमटेरा और बलमा नृत्य करने वाला आदिवासी परिवार आज जलाऊ लकड़ी बेचकर परिवार चला रहा है क्या सरकार को इन कलाकारों की ओर ध्यान नहीं देना चाहिए? सावन के महीने में महिलायें और पुरूष मिलकर ढोलक, मंजीरा, रमतूला का प्रयोग करते हुए सैरा नृत्य से भगवान इन्द्र का भी मन मोह लेते थे परन्तु आज इस लोक विधा को गाने वाले लोग नहीं हैं, शायद इसीलिए इन्द्र भगवान भी बुन्देलखण्ड पर नजर नहीं फेरते। कानड़ा नृत्य धोबी जाति का परम्परागत नृत्य है। इसे काड़रा एवं करड़ा नृत्य भी कहते हैं। भगवान कृष्ण से सम्बन्धित इस नृत्य को नया जीवन और पुर्नप्रतिष्ठा दिलाने वाले सागर के लक्ष्मीनारायण रजक जी का कहना है कि किसी जमाने में कानड़ा नर्तकों को समाज में इतना सम्मान और नेग मिलता था कि उसे जीविकोपार्जन के लिए भटकना नहीं पड़ता था। बिना कानड़ा नृत्य के शादी विवाह नहीं होते थे लेकिन

आजकल कानड़ा नृत्य के स्थान पर विवाह में लोग बैण्ड बाजों या रिकार्डिंग से काम निकालने लगे हैं। इसलिए इस कला के कलाकार आज न के बराबर हैं। बुन्देलखण्ड में तीर्थ यात्रा के समय जिन गीतों को ग्रामीण गाते हैं उन्हें टिप्पा या टिप्पे कहते हैं, कहीं–कहीं इसे बाबा के गीत बम्बुलिया तथा लमटेरा भी कहते है पर अब तो लोग तीर्थ यात्रा करके लौट भी आते हें पर लमटेरा और बम्बुलिया की आवाज तक नहीं आती।

वीर गीतकाव्य 'जगनिक' की अमर कृति आल्हा जो बुन्देलखण्ड की सर्वाधिक लोकप्रिय लोक विधा है। महोबा और आसपास के क्षेत्र में इस विधा के नामचीन कलाकार अपनी नई पहचान से जाने जाते हैं क्योंकि ये सब मनरेगा में मजदूरी करने पर विवश है। बिरहा में बिरह तथा वीरता प्रधान गीतों का गायन है, साथ–साथ श्रृंगार रस भी छिपा हुआ है परन्तु बिरहा से आज उसके कलाकार जुदा हो चुके हैं। बुन्देलखण्ड की ऐसी कई लोक विधाये कर्मा, शैला, ईसुरीफाग, चन्द्रावती, ज्यौनार, राछौर और ढोलामारू आदि आज अपने ही घर आंगन में सुरक्षित नहीं है। शासन द्वारा इन लोक विधाओं के संरक्षण हेतु कोई सहायता प्राप्त नहीं हो रही है, और न ही ऐसी सरकारी, गैर–संस्थाएं ग्रामीण अंचलों में स्थापित है कि उनमें लोक–कलाकारों का पंजीकरण हो और उनसे जुड़े वाद्यों का विवरण उल्लिखित हों। किसी भी गाँव घूम आइये सरकारी पैसे से खरीदा गया एक मजीरा भी नहीं मिलेगा। शायद ही आज तक किसी गाँव में गाँव के कलाकारों के कार्यक्रम सरकारी खर्च से कराये गये हों। नगरों–महानगरों में लोक विधाओं के जो कार्यक्रम शासन द्वारा शामिल कराये जाते है उन कलाकारों का गाँवों से कोई नाता नहीं होता। शहरों के ही प्रोफेशनल आर्टिस्ट होते है जो लोक कलाकारों की ऊँचाईयों को छू भी नहीं सकते। यह बहुत बड़ी त्रासद घटना है कि लोक से गायब हो रहे हैं – ईसुरी, जगनिक और असगरी आदि आदि। जिन गाँवों में अभी ईसुरी, जगनिक, असगरी है भी तो वो भुखमरी, बेकारी, बीमारी से तबाह है। जिन्हें उनकी सुधि लेनी है वे बेहूदा, उत्पाती पॉप गायकों के पोज ले रहे हैं, उनके लिए लाखों का स्टेज बनवा रहे हैं। लोक विधाओं को उनके घर गाँव से बदर किया जा रहा है, लोक कलाकार चौतरफा पश्चिमी भॅवर में फंसे हैं, अपमान का घूट पी रहे हैं, सरकारी अन्याय झेल रहे है बावजूद इसके वे अपनी अनमोल विरासत को कहीं न कहीं दामन से लगाकर जी रहे हैं। अगर शासन, प्रशासन, संगीत प्रेमी, समाजसेवी आदि इनमें से कोई एक कुनबा इन कलाकारों पर ध्यान दे तो इन लोक विधाओं को नई दिशा, नई प्रेरणा मिल सकती है। हमारे समक्ष इसका सबसे बड़ा उदाहरण भोजपुर क्षेत्र है। इस क्षेत्र से जुड़े लोग देश, विदेश बॉलीवुड आदि समृद्ध जगहों पर विराजमान हैं जिस कारण यहाँ से जुड़ी लोक संस्कृति, कलाओं और कलाकारों को व्यापक रूप में संरक्षण एवं संवर्धन प्राप्त हो रहा है। यहाँ तक कि ये क्षेत्र इतना सम्पन्न हो चुका है कि अपना स्वयं फिल्म उद्योग (भोजीवुड) तक बना चुके हैं। यही वजह है कि इस क्षेत्र की लोक विधाओं (चैती, कजरी, बिरहा, पचरा, बिदेसिया आदि) और इनके कलाकार सम्पन्न एवं समृद्ध हैं। हाँ ये अलग बात है कि कहीं न कहीं यहाँ कि लोक विधायें अपने वास्तविक रूप को खो भी रही हैं परन्तु परिवर्तन प्रकृति का नियम है। आज हर संस्कृति अपने नये रूप में उदीयमान है।

लोक संगीत एक ऐसा अथाह सागर है जिसमें अवगाहन तो किया जा सकता है किन्तु जिसे परिपोषित करना वास्तव में असम्भव है। लोक संगीत सीखने, उसमें पारंगत होने व उसे लिपिबद्ध करने के लिए एक जन्म तो क्या अनेकों जन्म भी कम पड़ेंगे। वैसे लोक संगीत की किसी भी विधा या अंश का प्रचलन सम्बन्धी दावा करना सत्यता से परे है, क्योंकि लोक संगीत के अंश के प्रचलन में प्रायः किंचित क्षेत्रीय असमानतायें दृष्टिगोचर होती हैं।

वर्तमान में समय बदल रहा है, परिवर्तन की होड़ सी लगी है। परिवेश, वातावरण एवं पर्यावरण आदि सभी में परिवर्तन आ रहा है। ग्लैमर के क्षतिकारक प्रभाव से कुछ भी अछूता नहीं रहा है। लोक संगीत इससे प्रभावित हुआ है जो उसके भविष्य के लिए अशुभ संकेत है। इस विकट परिस्थिति में आज का युवा, अपनी सांस्कृतिक निधि की ओर बेसुध सा प्रतीत हो रहा है। अपनी लोक संस्कृति को व्यवहार में लाने के लिए वह अपने ही घर आंगन में संकुचित हो रहा है। आज का युवा कल प्रौढ़ व वृद्ध होगा। लोक संगीत रूपी निधि आज जिन प्रौढ़ व वृद्धों के कण्ठों में है, कल आने वाले प्रौढ़ व वृद्ध अपनी ही निधि के लिए मोहताज हो जायेंगे और आगे आने वाली युवा पीढ़ी को उत्तर देने में अपने आपको निरीहता व असमर्थता की परिधि में खड़ा पायेंगे। लोक संगीत वाचिक परम्परा की सशक्त वस्तु है जो सदियों से पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तगत होती आ रही है, किन्तु वर्तमान परिस्थिति में इसके संरक्षण एवं मौलिक रख–रखाव की महती आवश्यकता आ पड़ी है।

यह संचार युग है। बाजार का युग है। विज्ञापन का युग है। इस निर्मम युग में लोक विधाओं का साँस लेना दूभर है। हमारे संचार माध्यम चाहे तो लोक विधाओं को जीवन दे सकते हैं लेकिन इससे उनकी कमाई क्या होगी? जालौन के तपे–तपाये लोक गायक साहब सिंह गायेंगे तो विज्ञापन कौन देगा ? सूचना/संचार माध्यमों की जिम्मेदारी क्या हमारे लोक की छवि बनाने की नहीं है ? सबको पता है कि हमारी सामाजिक शक्ल बिगाड़ने के लिए पैसा बरस रहा है। पश्चिमी कुनबे से आयी एक पॉप गायिका के लिए देश के औद्योगिक घराने खजाना लुटाते हैं मीडिया के सारे कैमरे उसे घेर कर खड़े हो जाते हैं और महोबा के लोक चर्चित तंबूरा गायक बृजलाल को मतदाता पहचान पत्र की फोटो भी घूँस देकर खिंचवानी पड़ती है।

बुन्देलखण्ड लोक सांस्कृतिक समृद्धि का प्रारम्भ से ही एक अनोखा संसार रहा है। वह जगत लोकलय का है। लोक विधाओं ने सामाजिक एकता को एक डोर में बांधे रखने का अनोखा कार्य किया है। राष्ट्रीय अखण्डता की इस रचनात्मक शक्ति के संवर्धन एवं संरक्षण का कार्य इन दिनों उपेक्षा का शिकार है। पाश्चात्य संस्कृति की चकाचौंध ने उन्माद का वातावरण सृजित किया है। क्षणिक उत्तेजना प्रकट करने वाले पाश्चात्य संगीत के सामने हजारों वर्षो की प्राचीन लोक विधायें दम तोड़ रही हैं। सिर्फ यही कारण इन विधाओं के लुप्त होने का कारण नहीं है अपितु स्थानीय लोगों की स्वाभाविक उदासीनता इस क्षेत्र की राजनीतिक गतिविधियाँ, दस्यु प्रभावित क्षेत्र होने के कारण बुन्देलखण्ड क्षेत्र का चहुमुखी विकास रूका हुआ है।

इन लोक विधाओं को सरकार एवं समाज द्वारा पुनः वही प्रतिष्ठा मिलनी चाहिए। इसके लिए वर्तमान पीढ़ी और आने वाली पीढ़ी को सचेत होना पड़ेगा। सांस्कृतिक गतिविधियों से जुड़े लोगों को ऐसी अनदेखी नहीं करनी चाहिए। लुप्त हो रही लोक विधाओं के शेष कलाकारों का परिचय होना आवश्यक है, लोक विधाओं के जो गायक, नर्तक यत्र–तत्र उपलब्ध हैं उन्हें खोजना, प्रोत्साहित करना, एक साथ मंच देना, संगठित करना एक कर्तव्य एवं धर्म होना चाहिए। बुन्देलखण्ड क्षेत्र में लोक संस्कृति केन्द्र की स्थापना होनी चाहिए। ऐसा करना लोक विधाओं के सागर से रत्न बटोरना है। सुविज्ञजनों के मत के आधार पर लोक विधायें शेष संगीत जगत की जननी हैं। लोक विधायें प्रभावी संचार विधि है। लोक विधायें स्थाई प्रभाव की सबल आधार है। इनमें लोकलय समाया हुआ है। छोटी सी पंक्ति दूर तक प्रहार प्रभाव, सम्प्रेषण की शक्ति से सम्पन्न है। टिकाऊ विकास के लिए लोक विधा का मार्ग ही श्रेयष्कर है। समाज परिवर्तन के लिए लोक विधा की स्थानीय पूँजी को हथियार बनाना होगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:

बुन्देली लोकगीतों का सांस्कृतिक अध्ययन – मोतीलाल चौरसिया

लोक–लय – गोपाल भाई

संगीत पत्रिका मासिक – संगीत कार्यालय, हाथरस